स्वामी विवेकानन्दः शिक्षा दर्शन एवं मानव निर्माण

डॉ0 शिवानी रावत*

सारांश

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में शिक्षा एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, विशेषकर आज के प्रतियोगात्मक, वैश्वीकरण आर्थिक स्थापना के दौर में जैसा हम आज देखते हैं। सभी का विश्वास है कि एक अच्छी शिक्षा आरामदायक जीवन जीने का एक विश्वसनीय माध्यम है क्योंकि यह एक अच्छी नौकरी की गारण्टी देता है अथवा किसी भी प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय में उच्च शिक्षा ग्रहण करने की सम्भावना भी दिलाता है। स्वामी विवकानन्द भारतीय शिक्षा के इतिहास के एक प्रमुख दर्शन शास्त्री के साथ ही एक शिक्षाविद भी है। उनके शिक्षा सम्बन्धी विचार सदैव ही उनके जीवन के दर्शन से प्रभावित होते रहें हैं। स्वामी विवेकानन्द वेदान्त दर्शन में विश्वास रखते थे जिसमें यह बताया गया है कि मनुष्य जीवन का अन्तिम लक्ष्य सृजनकर्ता के साथ एकात्मकता को प्राप्त करना है। उनके अनुसार प्रत्येक मनुष्य के हृदय में ईश्वर का वास होता है। इसलिये ईश्वर की पूजा का सबसे अच्छा माध्यम है मानव जाति की सेवा। उनके सबसे महत्वपूर्ण विषयों में से एक विषय है युवाओं में अच्छे तथा मजबूत चरित्र का निर्माण करना। उन्होंने ऐसी शिक्षा प्रणाली की वकालत की जो सारर्थक रूप से एक अच्छा नैतिक मनुष्य बनाने की प्रक्रिया को पूर्ण कर सके। विवेकानन्द के अनुसार इस प्रकार की शिक्षा प्रणाली का उद्देश्य एक मनुष्य में पहले से ही प्राप्त पूर्णता की अभिव्यक्ति का निर्माण करना होना चाहिये। वह हमेशा से इस बात पर विश्वास करते थे कि किसी भी राष्ट्र का विकास वास्तविक शिक्षा के बिना सम्भव नहीं है। उनके अनुसार प्रत्येक मनुष्य में एक अच्छे व्यक्तित्व का विकास राष्ट्र के निर्माण में भी बहुत ही आवश्यक है। इसलिये स्वामी विवेकानन्द ने मानवता निर्माण सम्बन्धी शिक्षा पर बल दिया, जिससे हम अच्छे नागरिक का निर्माण कर सकें जो राष्ट्रीय विकास में सहायक सिद्ध हो। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार मानव निर्माण का अर्थ है शरीर, मन तथा आत्मा का सामंजस्यपूर्ण विकास।

शब्द संकेत : प्रचंड, मानव– निर्माण, अभिव्यक्ति, सौहार्दपूर्ण, आवश्यक।

''शिक्षा वह नहीं है जो सूचना के रूप में आपके दिमाग में डाल दी गई है तथा वहाँ यह सूचना अनावश्यक दंगे करें आपके सारे जीवन में अपच फैला दे। हमारे पास जीवन–निर्माण, मानव निर्माण, चरित्र निर्माण तथा विचारों का मिलाना आवश्यकीय तत्व होना चाहिए। हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जिससे चरित्र का निर्माण हो, मन की शक्ति में बढोत्तरी हो जाये, बुद्धि का विकास हो तथा एक व्यक्ति अपने पैरों पर खड़ा हो पाये''।

–स्वामी विवेकानन्द

प्रस्तावना

समकालीन भारतीय विचार के मानवतावादी परम्परा नव–वेदान्त में, विवेकानन्द ने मानव निर्माण हेतु शिक्षा दर्शन को प्रस्तुत किया है। तत्कालीन शिक्षा के समकालीन भारतीय दर्शनशास्त्रियों के बीच विवेकानन्द एक ऐसे दर्शन शास्त्री थे जिन्होने शिक्षा की ब्रिटिश प्रणाली को भारत में लागू करने के विरूद्ध विद्रोह किया। भारत में ब्रिटिश सरकार द्वारा शुरू की गई शिक्षा प्रणाली के प्रति विवेकानन्द का एक आलोचनात्मक प्रतिरूप था। वह सोचते थे कि तत्कालीन शिक्षा का ढांचा भारतीय संस्कृति के अनुरूप नहीं था। उन्होंने इंगित किया कि इस प्रकार की शिक्षा प्रणाली सिर्फ बाह्य शक्ति परिवर्तन ला सकती है किन्तु आन्तरिक शक्ति अन्दर ही दबी रह जायेगी।

प्रचलित शिक्षा प्रणाली की आलोचना

तत्कालीन शिक्षा प्रणाली के विरूद्ध विवेकानन्द द्वारा जो आपत्ति उठाई गई वह यह थी कि प्रचलित व्यवस्था मानव को गुलाम बना रही थी, इसके द्वारा एक व्यक्ति गुलामी योग्य बन जाता था और कुछ नही। प्रचलित शिक्षा प्रणाली पर टिप्पणी करते हुये विवेकानन्द ने कहा कि यह व्यवस्था कुछ न होकर एक मशीन जैसी योग्य हो गई है जिससे क्लर्क का जन्म बड़ी तेजी से हो रहा है। यह प्रणाली लोगों को उनके विश्वास तथा आस्था से दूर ले जा रही है। अंग्रेजी पढ़े लोगों का यह विश्वास था कि गीता असत्य है तथा वेदों का महत्व कुछ नहीं अपितु ग्रामीण लोकसाहित्य मात्र है। समकालीन शिक्षा व्यवस्था की आलोचना करते हुये विवेकानन्द व्यक्ति की तुलना उस गधे से करते हैं जिसे मार–मार के घोड़ा बनाने की चेष्टा की जा रही हो तथा इस प्रक्रिया में गधा गधा ही रह जाता है। मानववादी दृष्टिकोण से भी तत्कालीन शिक्षा प्रणाली की उन्होंने आलोचना की। वह एक मानवतावादी थे तथा मानव–निर्माण हेतु एक अच्छी नैतिकशील शिक्षा प्रणाली के विकास हेतु

* सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग, डी0एस0बी0 परिसर, कु0वि0वि0 नैनीताल

हमेशा प्रार्थी रहे। ब्रिटिशों द्वारा लागू की गई शिक्षा व्यवस्था ऐसी नहीं थी इसलिए विवेकानन्द ने इसको स्वीकार नहीं किया। उन्होंने टिप्पणी करते हुऐ कहा – ''यह मानव निर्माण हेतु शिक्षा नहीं है। यह सिर्फ एक नकारात्मक शिक्षा है। एक नकारत्मक शिक्षा अथवा कोई भी प्रशिक्षण जो नकारात्मकता के सिद्धान्त पर आधारित हो, वह मृत्यु से भी अधिक बुरी है। जब एक बालक को विद्यालय ले जाया जाता है तो वह पहली चीज यह सिखता है कि उसका पिता मूर्ख है तथा दूसरी चीज यह सीखता है कि उसका दादा पागल मनुष्य है। तीसरी चीज वह यह सीखता है उसके सभी शिक्षक पाखंडी है तथा चौथी चीज यह सीखता है कि सभी धार्मिक पुस्तकें झूठी है और जैस ही वह सोलह वर्ष का होता है वह निषेध का एक टुकड़ा बन जाता है जिसमें न कोई जीवन है न ही हड्डी है। परिणाम यह है कि इस प्रकार की शिक्षा प्रणाली ग्रहण कर विगत पचास वर्षों में एक भी वास्तविक मानव का निर्माण नहीं हो पाया है। ऐसे वास्तविक मनुष्य जो कोई भी अस्तित्व में है उनकी शिक्षा भारत में न होकर कही और हुई है अथवा वो पुराने परम्परागत विश्वविद्यालयों में स्वयं को अंधविश्वासों से साफ करके आयें हैं[1]।

शिक्षा का उद्देश्य

विवेकानन्द के दर्शन के अनुसार शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य होने चाहिएः–

क– आत्मविकास

तत्कालीन शिक्षा प्रणाली के विपरीत विवेकानन्द आत्मविकास हेतु शिक्षा की वकालत करते हैं। वह कहते हैं कि ''शिक्षा के द्वारा मेरा मतलब वर्तमान शिक्षा प्रणाली से नहीं है परन्तु सकारात्मक शिक्षण से है। सिर्फ किताबी ज्ञान काम नहीं करेगा। हमें वह शिक्षा चाहिये जो चरित्र का निर्माण करें, मन को दृढ़ करें, विद्वता का विस्तार करें तथा जिसके द्वारा हर एक व्यक्ति अपने पैरों पर खड़ा हो सके। हम यह चाहते है कि पाश्चात्य विज्ञान को वेदान्त के साथ संयोजित किया जाये। ब्रह्मचर्य को आदर्श वाक्य मार्गदर्शक बनाया जाये। प्रत्येक को स्वयं पर श्रद्धा तथा विश्वास होना चाहिए। विवेकानन्द के यह शब्द शिक्षा की भारतीय परिभाषा की विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। अधिकांश पाश्चात्य शिक्षाशास्त्री कहते हैं कि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति का पर्यावरण के साथ समंजस्य स्थापित करना होना चाहिए।

दूसरी ओर भारतीय दर्शन परम्परा के अनुसार शिक्षा, जो मानव जाति में जन्मजात थी, का अहसास होना। सच्चा ज्ञान–बाहर से नहीं आ सकता। इसकी खोज किसी विशिष्ट द्वारा स्वयं में की जाती है जो कि सभी ज्ञान का श्रोत है। विवेकानन्द के अनुसार समस्त विश्व में व्याप्त ज्ञान दिमाग से ही प्राप्त किया गया है। ब्रह्माण्ड का असीमित पुस्तकालय आपका मस्तिष्क है। ब्राह्य विश्व मात्र सलाह के समान है अथवा अवसर है जो आपको अपने मस्तिष्क को पढ़ने की शोभा देता है। सेब का गिरना न्यूटन को सलाह देता है तथा वह अपने मस्तिष्क को पढ़ता है। वह अपने मस्तिष्क में आये सभी विचारों को जोड़ते हुए पुनः व्यवस्थित करता है और एक नयी कड़ी की खोज कर हमारे समक्ष रखता है जिसे हम गुरूत्वाकर्षण का सिद्धान्त कहते है। इस प्रकार विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा का मुख्य कार्य मस्तिष्क में छुपे हुये ज्ञान को बाहर लाना है। आत्म–विकास की प्रक्रिया ही शिक्षा है। विवेकानन्द के शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जैसे एक पौधा अपनी स्वयं की प्रकृति का विकास करता है ठीक उसी प्रकार एक बच्चे का विकास अपनी स्वयं की प्रकृति के अनुसार होता है, उसे पढ़ाया नही जा सकता। एक व्यक्ति की शिक्षा का मानक उसके द्वारा पढ़ी गई पुस्तकों के आधार पर नहीं मापा जा सकता अपितु उसके मस्तिष्क में अज्ञानता रूपी मोटे आवरण से जरूर मापा जा सकता है। आवरण जितना मोटा होगा, अज्ञानता उतनी ज्यादा होगी। जैसे–जैसे ज्ञान का प्रकाश वहाँ जायेगा अज्ञानता का आवरण धीरे–धीरे हट जायेगा। एक शिक्षक का यह कर्त्तव्य है कि वह अपने मार्गदर्शन में शिष्य के मस्तिष्क को सक्रिय बनाये तथा ऐसी शिक्षा दे जो उसके अन्दर छुपी हुये ज्ञान को उजागर करें[2]।

ख– स्वधर्म का पालन

विवेकानन्द ने स्वधर्म के विचार को पूर्ण समर्थन दिया। प्रत्येक व्यक्ति को अपने आप ही विकसित होना चाहिए। किसी को दूसरे की नकल नहीं करनी चाहिए। इसलिए उन्होंने विदेशी शिक्षा को लागू करने का घोर विरोध किया। उन्होंने पूछा किसी दूसरी भाषा में किसी अन्य के विचारों को आत्मसात करना तथा अपने मस्तिष्क में उस विचार को डाल लेना और किसी विश्वविद्यालय से इसके लिए डिग्री प्राप्त कर लेना क्या यही शिक्षा है ? सच्चा सुधार स्व–प्रेरित होता है। एक बालक में किसी भी प्रकार का बाह्य दबाव नहीं होना चाहिए। बाह्य दबाव केवल विध्वंसक प्रतिक्रिया का ही सृजन करते हैं जिसका परिणाम हठ तथा अनुशासनहीनता ही होता है। केवल स्वतंत्रता, प्रेम तथा सहानुभूति के माहौल में ही एक बालक में साहस तथा आत्म निर्भरता का विकास हो सकता है। उसके क्रिया–कलाप तथा सक्रियता को अनावश्यक जाँचना ठीक नहीं है। एक शिक्षक को उसे क्या करना है अथवा क्या नहीं बारम्बार बताने की जरूरत नही है। इस प्रकार के नकारात्मक दिशा–निर्देश उसकी विद्वता तथा मानसिक विकास को प्रभावित करते हैं। उस बालक को खुद के लिए खड़ा होना सीखाना चाहिए। विवेकानन्द सुझाव देते है कि अगर आप किसी को शेर नही बनने दोगे वह लोमड़ी ही बनेगा। इसलिए शिक्षा में कुछ ऐसा

संशोधन होना चाहिए कि प्रत्येक बालक के लिए वह सुविधाजनक हो। प्रत्येक बालक को उसकी अपनी आन्तरिक प्रकृति के अनुरूप विकसित होने के अवसर जरूर प्रदान करने चाहिए[3]।

ग– विकास की स्वतंत्रता

विवेकानन्द हमेशा से ही किसी भी बालक पर किसी भी प्रकार के ब्राह्य दबाव के खिलाफ थे। वे स्वतंत्रता के निष्ठावान हिमायती थे। आत्मविकास के लिये स्वतन्त्रता प्रथम माँग है। एक बालक को उसके प्रकृति के अनुसार विकास हेतु पूर्ण स्वतंत्रता दी जानी चाहिए। विवेकानन्द के शब्दों में आप किसी बालक को सीखा नहीं सकते जैसे आप एक पौधें को उगा नहीं सकते। आप क्या कर सकते है सिर्फ उसकी मदद कर सकते है। इसे उन्होंने नकारात्मक पक्ष माना है। आप अवरोधों को हटा सकते हैं परन्तु ज्ञान अपनी प्रकृति से खुद ही बाहर आ जायेगा। जैसे किसी मिट्टी को ढीला छोड़ दीजिए ताकि वह आसानी से बाहर आ जाये। उसके चारों ओर एक बाड़ा बना दीजिए ताकि वह किसी के द्वारा मारा न जाये तथा आपका कार्य यहाँ समाप्त हो जाता है। आप इसके अलावा कुछ भी नहीं कर सकते। बाकी सब आत्म–अभिव्यक्ति है जो अपने स्वयं की प्रकृति से बनी होती है[4]।

घ– चरित्र निर्माण

आत्म विकास के लिए चरित्र एक ठोस आधार है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य आत्म विकास के साथ चरित्र निर्माण भी होना चाहिए। चरित्र को परिभाषित करते हुए विवेकानन्द कहते है किसी व्यक्ति का चरित्र उसकी प्रवृत्तियों का सकल होता है तथा उसके मस्तिष्क में आने वाले विचारों का योग होता है। उसकी आत्मा में सुख तथा दुःख गुजरते है तो वे कुछ अलग ही आकृति छोड़ जाते हैं। इन सभी संयुक्त प्रभावों का परिणाम ही मानव चरित्र कहलाता है। शिक्षा का उद्देश्य चरित्र निर्माण है। यह सब किसी विशेष व्यक्ति के आदर्श अभिलषित पर निर्भर करता है। एक शिक्षक द्वारा अपने विद्यार्थियों को उच्च आदर्शो के बारे में बताना चाहिए। एक अच्छे चरित्र के निर्माण करने का सबसे अच्छा उदाहरण यह है कि एक शिक्षक को स्वयं का चरित्र अच्छा बनाना चहिए जो कि विद्यार्थी के लिये एक अनूठी मिसाल साबित हो सके। इस बिन्दु पर जोर डालते हुए विवेकानन्द कहते है "एक शिक्षक के व्यक्तिगत जीवन के बगैर शिक्षा का सवाल ही पैदा नहीं होता है। किसी भी व्यक्ति को अपने बाल्यकाल से ही ऐसे व्यक्ति के साथ रहना चाहिये जिसका चरित्र प्रज्वलन अग्नि के समान हो और जो एक बालक में स्वयं ही उच्च शिक्षाओं को स्थापित करने का एक बहुत ही बढ़िया उदाहरण वह स्वयं ही हो। ज्ञान देने का उत्तरदायित्व एक बार फिर से त्यागियों के कन्धों पर ही आता है। भारतीय प्राचीन शिक्षा प्रणाली में शिक्षक अपने शिष्य के समक्ष उच्च आदर्श प्रस्तुत करते हैं जो बदले में अपनी क्षमता के अनुसार इन आदर्शो को प्रवर्तित करते है[5]।

चरित्र के निर्माण के लिए निम्नलिखित तत्व आवश्यक है–

1– कठोर परिश्रम

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार चरित्र निर्माण के लिए कठोर परिश्रम नितान्त आवश्यकीय घटक है। यह उन लोगों के लिए असम्भव है जो सभी प्रकार के आनन्द की अभिलाषा रखते हैं। चरित्र निर्माण की प्रक्रिया में संघर्ष सबसे अच्छा शिक्षक होता है। सक्रियता तथा पुरूषार्थ जीवन के मुख्य संकेत होते है। निष्क्रियता जीवन शक्ति की कमी को दर्शाती है। सभी प्रकार के सुखों में रहते हुये तथा परिश्रम से भाग कर किसी भी व्यक्ति के उच्च चरित्र का निर्माण नहीं हो सकता[6]।

2– नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्य

कठिन परिश्रम के अलावा चरित्र के निर्माण हेतु कुछ गुण जैसे शुद्धता, ज्ञान की जिज्ञासा, दृढ़ता, विश्वास, विनम्रता, त्याग तथा उपासना आदि का विकास एक अच्छे शिक्षक के उदाहरण होते हैं तथा शिष्य के प्रयास से ये सभी गुण विकसित किये जा सकते है। विवेकानन्द के अनुसार "हमारा विकास नहीं हो सकता जब तक हमारे दिल में शिक्षक के लिए विश्वास, विनम्रता, त्याग तथा उपासना न हो। जिन देशों ने इस प्रकार के गुरू शिष्य सम्बन्धों की उपेक्षा की है वहाँ शिक्षक एक प्रवक्ता मात्र बन गया है। शिक्षक सिर्फ अपने वेतन की अपेक्षा रखता है तथा शिष्य दिये गये व्याख्यान के शब्दों से अपने मस्तिष्क को भर लेता है तथा दोनों अपने अलग–अलग रास्ते में चले जाते है। एक सच्चा शिक्षक वह है जो जल्दी से अपने शिष्य के स्तर तक नीचे आ सके तथा अपनी आत्मा को शिष्य की आत्मा में स्थानांतरित कर दें तथा उसके मस्तिष्क से देखे भी तथा समझे भी[7]।"

3– गुरूकुल प्रणाली

इस प्रकार के गुरू शिष्य के बीच सम्बन्ध शिक्षा के गुरूकुल प्रणाली में ही सम्भव हो सकते है। अतः विवेकानन्द ने प्राचीन भारतीय गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का समर्थन किया। इन गुरुकुलों में शिष्य शिक्षक की सेवा करते थे जो इसके बदले में शिष्य को ज्ञान प्राप्त करने में हर जगह मदद करते थे। उस समय शिक्षक तथा शिष्य के बीच कोई भी आर्थिक सम्बन्ध नहीं होता था जो आज की शिक्षा प्रणाली का एक बहुत बड़ा अभिशाप है[8]।

4– अच्छी आदतों का निर्माण

चरित्र बड़ी घनिष्टता से आदतों से जुड़ा हुआ होता है। आदतें चरित्र की अभिव्यक्ति है। अच्छी आदतें अच्छे चरित्र को बनाती है। जबकि समकालीन मनोवैज्ञानिक यह स्वीकार करते है कि प्रत्येक के जीवन में आदतों का मूल्य सर्वोपरि होता हैं। विवेकानन्द ने आदतों का मूल्य न केवल इस जीवन में अपितु आने वाले जीवन में भी सर्वोच्चता के साथ स्वीकार किया है। एक बुरी आदत को अच्छी आदत विकसित करके सुधारा जा सकता है। अगर कोई व्यक्ति निरन्तर ही सोचे कि वह साहसिक तथा प्रगतिशील है तो वह आत्मविश्वास के साथ बुरी आदतों को त्याग देगा। किसी भी व्यक्ति की आदतों में सुधार लाने का श्रेय किसी शिक्षक या अभिभावक को नहीं जाता है बल्कि उसका श्रेय स्वयं को जाता है। मनुष्य अपने स्वयं के कर्मों के जाल में फँसा हुआ होता है जिससे वह स्वयं ही अकेले बाहर निकल सकता है। उसकी मदद कोई भी और व्यक्ति नहीं कर सकता। हम स्वयं ही इस जीवन रूपी संघर्ष में अपने सबसे अच्छे पथ प्रदर्शक होते है[9]।

5– गलतियों से सीखना

चरित्र निर्माण की प्रक्रिया में एक बालक को गलती करने की छूट भी दी जानी चाहिए। वह अपनी गलतियों से बहुत सीखेगा। गलतियाँ हमारे चरित्र की प्रगति में प्रारम्भिक प्रयास होते है। यह प्रगति साहस तथा दृढ़ इच्छाशक्ति की मांग करती है। दृढ़ इच्छाशक्ति मजबूत चरित्र की निशानी है। इच्छाशक्ति व्यक्ति को महान बनाती है। अतः किसी को भी हतोत्साहित या रोना नहीं चाहिए। प्रत्येक को अपनी इच्छाशक्ति पर काम करना चाहिए तथा इसका परिणाम वह यह देखेगा कि जिसे वह असम्भव समझ रहा था वह सरल तथा सम्भव है। विवेकानन्द स्वयं भी एक आदर्श शिक्षक थे। उनके शब्द महिला एवं पुरूष दोनों पर ही जादू कर देते थे। अपना स्वयं का उदाहरण देते हुये विवेकानन्द लोगों से चरित्र निर्माण करने का प्रश्न करते है तथा अपने वास्तविक व्यवहार को अभिव्यक्त करने की प्रेरणा भी देते हैं[10]।

निष्कर्ष

अन्त में निष्कर्ष में यह कहा जा सकता है कि स्वामी विवेकानन्द ने यह पहले ही समझ लिया था कि मानव जाति संकट के दौर से गुजर रही है। आदर्शों की लड़ाई, व्यवहार तथा आदतें माहौल को खराब कर रहे हैं। सभी पुराणों के लिए अनादर समाज का चलन बन रहा था। विवेकानन्द की शिक्षा प्रणाली तथा दर्शन के विवेचन से यह स्पष्ट हो गया कि मानव जाति के उत्थान के लिए शिक्षा का होना अनिवार्य है। बिना किसी गरीबी, धर्म, जाति तथा रंग के आधार पर भेदभाव किये हुये। विवेकानन्द के अनुसार आत्म निरीक्षण की खोज शिक्षा है। न कि अप्राकृतिक तरीके से सूचना देना शिक्षा है। विवेकानन्द ने शिक्षा का सिद्धान्त बहुत ही विस्तृत है। कोई भी ऐसा बिन्दु नहीं है जो कि विवेकानन्द की नजरों से बचा हुआ हो। जहाँ तक उनके शिक्षा के सिद्धान्त की बात है तो हमें आज के भारत में इस प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता है जिसके द्वारा हर कोई अपने पैरों पर खड़ा हो सके तथा हर कोई शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक रूप से मजबूत बन पाये। इस प्रकार का नागरिक किसी भी समाज के लिए हितकर साबित होगा।

संदर्भ–

1. दत्ता, भूपेन्द्रनाथः स्वामी विवेकानन्द, पेटियोट प्रोफेट, नवभारत प्रकाशन, कलकत्ता, 1993, पृष्ठ संख्या 413.
2. चौबे, एस0पी0; रिसैनट एजूकेशनल फिलोसोफीज इन इण्डिया, राम प्रसाद एण्ड सन्स, आगरा, 1967, पृष्ठ संख्या 243.
3. चर्तुवेदी, बदरीनाथ, स्वामी विवेकानन्द, द लिविंग वेदान्ता, पेगुंईन, 2006 पृष्ठ, संख्या 327.
4. भारती, के0 एस0ः इनसाईकलोपिडिया ऑफ एमिनेन्ट थिंकर्स, दि पोलिटिकल थॉट ऑफ विवेकानन्द, कोनसेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, दिल्ली, 1998, पृष्ठ संख्या 289.
5. मुखर्जी, मनी शंकर, दि मौंक एज मैनः दि अननोन लाइफ ऑफ स्वामी विवेकानन्द, 2011, पृष्ठ संख्या 287.
6. चट्टोपाध्याय, राजगोपालः स्वामी विवेकानन्द इन इण्डियाः ए करैक्टिव बायोग्राफी, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, 1999 पृष्ठ संख्या 365.
7. गुप्ता, एन0 एल0ः स्वामी विवेकानन्द अनमोल प्रकाशन, दिल्ली, 2003, पृष्ठ संख्या 219.
8. शर्मा, बी0ः स्वामी विवेकानन्द–ए फॉरगोट्टन चैप्टर ऑफ हिज लाईफ, ऑक्सफोर्ड बुक, मिशीगन, 1963, पृष्ठ संख्या 232.
9. सिंह, वी0ः स्वामी विवेकानन्दः ए फाईनियर इन सोशियल रेवोल्यूशन, विस्ट इनटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली 2008, पृष्ठ संख्या 210.
10. वर्मा, एम0ः दि फिलॉसॉफी ऑफ इण्डियन एजूकेशन, मिनाक्षी प्रकाशन, मेरठ,1969, पृष्ठ संख्या 357.